◆ भारतीय संस्कृति ◆

सर्वोत्तम शिक्षा क्या है?

डॉ. शिवकुमार ओझा

Scanned by CamScanner

विषय सूची

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
	उपोद्घात	**9**
1.	**विषय प्रवेश**	**15**
2.	**आधुनिक समाज, मान्यताएँ एवं दोष**	**23**
2.1	आधुनिक समाज	23
2.2	आधुनिक मान्यताएँ एवं दोष	24
2.3	विशेष बात	28
3.	**आधुनिक शिक्षा व उसके दोष**	**31**
3.1	अंग्रेजी भाषा में ''शिक्षा'' शब्द के अर्थ	31
3.2	आधुनिक शिक्षा	32
3.3	आधुनिक शिक्षा के दोष	33
3.4	विशेष बात	46
4.	**मानव-बुद्धि की सीमाएँ**	**48**
4.1	ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति सीमित	49
4.2	बुद्धि के निर्णय प्राय: निश्चयात्मक नहीं	50
4.3	बुद्धि अन्यों के आश्रित रहती	51
4.4	बुद्धि मौलिक पदार्थ या उसके गुणों को नहीं बनाती	52
4.5	बुद्धि आत्मसात नहीं कर पाती	52
4.6	महत्वपूर्ण तथ्यों से भी बुद्धि अनभिज्ञ	53
4.7	बुद्धि में तीन दोष होते	54
4.8	निरर्थक शारीरिक हरकतों का पाया जाना	54
4.9	विस्मयकारी घटनाओं को समझ पाना कठिन	54
4.10	बीजरूप को समझना सम्भव नहीं	54
4.11	भूत या भविष्य का आकलन सम्भव नहीं	55
4.12	बुद्धि अपने क्रिया-कलापों को प्राय: नहीं समझती	55
4.13	संवेदनाओं के सामने बुद्धि को प्राय: झुकना पड़ता	56

Scanned by CamScanner

4.14 सृष्टि-विस्तार में मानवीय बुद्धि पहला पदार्थ नहीं ... 56
4.15 पारमार्थिक तथ्यों को समझना सम्भव नहीं 56
5. क्या बुद्धि शिक्षा का विधि-विधान निश्चय कर सकती? ..58
5.1 प्रकृति का महत्त्व 59
5.2 आधुनिक शिक्षा के प्रति चिन्ता 59
5.3 निश्चयात्मक बुद्धि की आवश्यकता 60
5.4 कुशल एवं निश्चयात्मक बुद्धि किसकी हो सकती? **61**
6. शिक्षा में प्रमाणों का आश्रय आवश्यक 63
6.1 प्रमाण किसे कहते? 63
6.2 प्रमाण के प्रकार 64
6.3 आप्त प्रमाण सम्बधी विशेष विचार 64
6.4 तर्क की प्रतिष्ठा नहीं 67
6.5 तर्क की मान्यता सीमित..... 67
7. शिक्षा के निर्धारण में व्यापक दृष्टिकोण आवश्यक 69
7.1 ज्ञान के चार प्रकार 70
7.2 प्रकृति और उसके गुण 72
7.3 पुनर्जन्म 77
7.4 सुख-दु:ख का विस्तृत विश्लेषण तथा अखण्ड आनन्द 78
7.5 अन्त:करण और उसकी वृत्तियाँ.....81
7.6 अतीन्द्रिय सत्ताओं की विद्यमानता 84
7.7 मनुष्य शरीर में अद्वितीय शक्तियों की विद्यमानता .. 87
7.8 मनुष्य के बन्धन, तत्वज्ञान और मुक्ति 90
7.9 आधुनिक-जीवन सम्बन्धित अज्ञान.....91
7.10 सृष्टि का विस्तार 92
8. शिक्षा और शिक्षा के उद्देश्य 95
8.1 संस्कृत शब्द ''शिक्षा'' का अर्थ 95
8.2 शिक्षा का उद्देश्य पुरुषार्थ चतुष्टय 96
8.3 शिक्षा के उद्देश्य में धर्म तथा उसका महत्व क्यों? .. 98

Scanned by CamScanner

8.4 शिक्षा का परम् उद्देश्य केवल अर्थ और काम क्यों नहीं? 100
8.5 शिक्षा का उद्देश्य पुरुषार्थ चतुष्टय क्यों? 102
8.6 विशेष बात 104
9. शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के उपाय 106
9.1 विद्योपार्जन 107
9.2 अन्त:करण की शुद्धि 129
9.3 समाज का विधि विधान 132
9.4 विधि-विधानानुसार शिक्षा प्राप्ति का फल 158
9.5 शिक्षा के परमलक्ष्य की प्राप्ति के उपाय 159
10. शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति का फल 163
10.1 दैवी सम्पदा का अर्जन तथा पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति 163
10.2 इन्द्रियों की शक्ति का वर्धन एंव विवेकशील होना 164
10.3 परमप्रेम या परमज्ञान की सिद्धि 165
11. आधुनिकता से ग्रस्त युवकों के प्रश्न तथा उनका समाधान 166
11.1 वेलेंटाइन-डे मनाने में हर्ज क्या, क्यों न उल्लास से मनाएँ? 166
11.2 वर्तमान जीवन अपना है, क्यों न मनोनुकूल कार्य करें? 175
11.3 ''भूख अपनी है'' क्यों न ''स्वादिष्ट भोजन'' से मिटाएँ? 177
12. आधुनिक विद्यार्थियों की कुछ अज्ञानताओं का अनावरण . 181
12.1 भारत की स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में विचार 182
12.2 भारत के इतिहास से सम्बन्धित विचार 185
12.3 धर्म से सम्बन्धित विचार 188
12.4 नवयुवक नयी विचारधारा वाला है, इस सम्बन्ध में विचार 189

Scanned by CamScanner

उपोद्घात

मानव जीवन की नैसर्गिक आवश्यकताओं या अनुभूतियों का महत्त्व अधिक है। जिन पदार्थों का नित्यप्रति हम संग करते हैं, उपयोग करते हैं, या हमें जो भाती हैं उनके प्रति राग होना, आकर्षण होना स्वाभाविक प्रतीत होता है। भौतिक पदार्थों के प्रति इसी आकर्षण ने आधुनिक शिक्षा को जन्म दिया, पल्लवित किया तथा शिक्षा का सम्वर्धन किया है। आधुनिक शिक्षा हमारे लिए धन-सम्पत्ति अर्जित करने में सार्थक सिद्ध होती है, दैनिक आवश्यकताओं एवं सुविधाओं की पूर्ति कराती है तथा समाज में हमें ऐश्वर्य दिलाती है, जिन्हें पाकर हमें सुख और संतोष की प्रतीति होती है। इसी कारण आधुनिक शिक्षा बड़ी सरलता से शीघ्र ही संसार में सर्वाधिक प्रचलित हुई। इस शिक्षा ने भौतिक पदार्थों को भोगने की लालसा का भी सम्वर्धन किया है। भौतिक पदार्थों के प्रति लालसा व तृष्णा इतनी बढ़ गयी है कि आधुनिक मनुष्य भौतिक संस्कृति के प्रति अत्यन्त आसक्त हो गया है, उनसे चिपक कर रह गया है तथा वही उसके चिन्तन का मुख्य विषय हो गया है। अशिकांश आधुनिक मनुष्यों को अन्य किसी संस्कृति के जानने की इच्छा नहीं होती, उसे वे निरर्थक समझते हैं। भारतीय संस्कृति जब अन्य कल्याणकारी विचारधारा की ओर इंगित करती है तो आधुनिक मनुष्य उसे समझ नहीं पाता, उसके प्रति उदासीन हो जाता है अथवा अप्रवृत्ति (Inertia) प्रगट करता है।

आधुनिक भौतिकवादियों को शंका हो सकती है कि जब शिक्षा की चर्चा हो रही है, तो आधुनिक प्रगतिवादी युग में प्राचीन भारतीय संस्कृति द्वारा प्रतिपादित शिक्षा की चर्चा अप्रासंगिक है, अनुपयुक्त है। इस शंका का समाधान स्पष्ट है कि प्रगतिशील कही जाने वाली भौतिक शिक्षा मानव जीवन से सम्बन्ध रखने वाले अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने में जब असमर्थ है तो हमें उस शिक्षा का अनुसन्धान करना होगा जो उन प्रश्नों का यथोचित समाधान करती हुई मानव जीवन की दैनिक अनिवार्यताओं की पूर्ति करती है, मनुष्य को सर्वोत्तम पद पर स्थापित

Scanned by CamScanner

करती है तथा यह सर्वोत्तम पद क्या हो सकता है इसकी स्पष्ट व्याख्या करती है। यह सामर्थ्य केवल भारतीय संस्कृति द्वारा प्रतिपादित शिक्षा में ही सन्निहित है।

भारतीय संस्कृति (हिन्दू धर्म, वैदिक संस्कृति, सनातन धर्म) भौतिक शिक्षा के विषय में गूढ़ता से विचार कर उस पर अनेक प्रश्नचिन्ह लगाती है। भारतीय संस्कृति पूछती है कि सांसारिक मनुष्य की बुद्धि विभिन्न दोषों से ग्रस्त है, क्या ऐसी बुद्धि शिक्षा के ध्येयों और रूपों को सुनिश्चित कर सकती है? भारतीय संस्कृति जानना चाहती है कि जीवन की वास्तविकता एवं पूर्णता क्या केवल भौतिक संसाधनों के भोग में ही है? यह भौतिक जीवन पाशविक बनकर क्यों रह गया है? हमारी भोगवादी वृत्तियाँ एवं लालसाएँ क्यों नहीं समाप्त होतीं? भोगवादी जीवन के लिए संघर्ष बहुत हैं, फिर भी स्थायी सन्तोष क्यों नहीं मिलता? सुख-दु:ख बारम्बार आते-जाते हैं, दु:खों की निवृत्ति सदा के लिए कैसे होगी? कर्म की पराकाष्ठा क्या है? ज्ञान की पराकष्ठा क्या है? इस प्रकार अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछे जा सकते हैं, किन्तु उनके उत्तर प्रदान करना भौतिक शिक्षा के सामर्थ्य के बाहर है। इसलिए भारतीय संस्कृति विशाल दृष्टिकोण रखती हुई सर्वोत्तम शिक्षा प्रदान करती है जिसके अन्तर्गत इन सभी महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के समीचीन उत्तर प्राप्त होते हैं तथा अर्थ (धन-सम्पत्ति) और काम (इच्छा) की पूर्ति भी होती है।

हमें इस तथ्य को भी समझना एवं स्वीकारना होगा कि प्रकृति के किसी भी पदार्थ के गुणों का हम निर्माण नहीं करते, उनका उपयोग ही करते हैं। यदि कोई कहे कि दो पदार्थों को मिलाकर हम किसी पदार्थ के गुण को परिवर्तित कर सकते हैं, किन्तु यह सत्य नहीं क्योंकि दो पदार्थों के मिलने से जो गुण उस पदार्थ में होने चाहिए उसकी योग्यता उसमें पहले से ही विद्यमान है, हमने तो केवल उसका अनुसन्धान किया है। प्रकृति के किसी पदार्थ में उसके निश्चित गुण यदि न होते तो उन गुणों का उपयोग करना सम्भव नहीं होता। इसी प्रकार मनुष्य को शिक्षा ग्रहण कर पाने का गुण उसे पहले से ही प्राप्त है, शिक्षा काल में मनुष्य केवल उस गुण का

Scanned by CamScanner

उपयोग ही करता है। अब प्रश्न उठता है कि मनुष्य अधिक-से-अधिक कितनी शिक्षा ग्रहण कर सकता है, इसकी क्या कोई सीमा भी है? इस प्रश्न का उत्तर भौतिक शिक्षा में नहीं खोजा गया है। भारतीय संस्कृति के अनुसार मनुष्य में शिक्षा ग्रहण करने की अर्थात् ज्ञान प्राप्त करने की योग्यता असीम है जो उसे पहले से ही प्राप्त है। इसका कारण है कि समस्त ज्ञान उस आत्मतत्त्व (चेतनतत्त्व, आत्मा) से प्रवाहित हो रहा है जो स्वयं ज्ञान स्वरूप है, असीम ज्ञान का भण्डार है, समस्त ज्ञान का स्रोत है, और यह आत्मतत्त्व मनुष्य शरीर में ही विद्यमान है। इसलिए भारतीय संस्कृति द्वारा प्रतिपादित शिक्षा का परम उद्देश्य मनुष्य को उस आत्मतत्त्व में स्थापित करना है तथा उसके लिए उपाय बताना है जहाँ से समस्त ज्ञान प्रवाहित हो रहा है। यही शिक्षा की पराकाष्ठा है, परम आदर्श है। यह आदर्श व्यावहारिक है, इसे प्राप्त किया जा सकता है, क्योंकि भारतवर्ष का इतिहास इसका साक्षी है।

आधुनिक विज्ञान ने स्थापित किया है कि कोई भी भौतिक द्रव्य पदार्थ (जैसे सोना, लोहा, जल आदि) केवल वह नहीं है जैसे वे भिन्न-भिन्न गुणों वाले दिखलायी देते हैं। वास्तव में वे शक्ति (जड़ शक्ति) के पुञ्ज (समूह, ढेर) हैं और उस शक्ति (Energy) के रूप में उनमें कोई असमानता नहीं है। इसी प्रकार भारतीय संस्कृति द्वारा प्रतिपादित शिक्षा स्थापित करती है कि मनुष्य में जड़ शक्ति और चेतन शक्ति दोनों ही आत्मरूप से विद्यमान हैं। इसलिए भारतीय संस्कृति द्वारा प्रतिपादित शिक्षा मनुष्य शरीर के विकारों को निकालकर तथा अज्ञानरूपी आवरण को नष्ट कर इन दोनों प्रकार की शक्तियों का साक्षात्कार कराती है, अर्थात् मनुष्य को स्वयं की आत्मा में स्थापित करती है।

आधुनिक युग में भौतिक शिक्षा धारण कर भारतीय संस्कृति द्वारा रची गयी शिक्षा के सामर्थ्य को हम विस्मृत कर बैठे। यदि हम कह सकें तो कहेंगे कि गीदड़ की खाल सदा धारण करते रहने के कारण तथा गीदड़ों के साथ सदा रहने के कारण, शेर अपने को गीदड़ समझने लगे तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार आधुनिक भारतवासी पाश्चात्य

Scanned by CamScanner

भौतिक शिक्षारूपी गीदड़ की खाल को धारण किए हुए हैं तथा भौतिकवादी समूहों के साथ उनका सदा संसर्ग रहता है, इसलिए भारतीय अपने शेर रूपी शिक्षा के सामर्थ्य को पहचानते नहीं। जैसे किसी वृद्ध को चलने में तथा मार्ग के लक्ष्य तक पहुँचने में अपनी लाठी का सहारा रहता है, इसी प्रकार निर्बल एवं अज्ञानी बुद्धि वाले सांसारिक मनुष्य को अपने लक्ष्यों की पहचान कराने तथा उनकी प्राप्ति कराने में भारतीय संस्कृति द्वारा प्रतिपादित शिक्षारूपी लाठी का आश्रय रहता है।

प्राचीन भारत में शिक्षा का सम्वर्धन इस प्रकार किया गया था कि मनुष्य की भौतिक उन्नति के साथ-साथ आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त होता रहे। भौतिक उन्नति से भौतिक शरीर का निर्वाह होता है जो आवश्यक है। आध्यात्मिक उन्नति से मानव बुद्धि का रूपान्तरण होता है, जो शिक्षा की पराकष्ठा को प्राप्त करती है जिसकी अत्यन्त उपादेयता निर्विवाद है और जो दु:खों की आत्यान्तिक निवृत्ति करती है। प्रस्तुत पुस्तक शिक्षा के इन्हीं उद्देश्यों को प्रगट करने तथा इनकी प्राप्ति के उपाय बताने का प्रयत्न करती है।

पुरातन पारम्परिक शिक्षा एवं जीवन पद्धति में निम्न लिखित गुणों का समावेश होने के कारण उसपर विचार करना आधुनिक परिवेश में आवश्यक हो गया है –

1. पुरातन शिक्षा एवं जीवन पद्धति अत्यंत व्यापक दृष्टिकोण पर आधारित है, सनातन है,
2. आधुनिक जीवन के अनुत्तरित प्रश्नों का सटीक उत्तर प्रदान करती है,
3. मनुष्य के चरित्र का उत्थान होना भारतीय संस्कृति के परमलक्ष्य का आनुषंगिक फल है,
4. ''अर्थ''और ''काम''की प्राप्ति के मार्ग को (अर्थात् मनुष्य एवं समाज के जीवन को) स्वत: स्थिरता प्रदान करती है,
5. मनुष्य के अन्दर व्याप्त समस्त अज्ञान को मिटाती है,
6. दु:ख की आत्यन्तिक निवृत्ति तथा अखण्ड आनन्द प्राप्त कराती है,

Scanned by CamScanner

7. पाशविक जीवन से दिव्य जीवन की ओर ले जाती है,
8. मानव जीवन को बड़े सूक्ष्म ढंग से सँवारती तथा अन्तर्निहित शक्तियाँ जाग्रत कराती है,
9. प्रकृति के साथ बंधुत्व रखकर मानव जीवन यापन का विधि-विधान बनाती है जो सभी वर्गों के लिये व्यावहारिक, लाभकारी एवं कल्याणकारी है,
10. विभिन्न पदार्थों का विश्लेषण विस्तृत, सूक्ष्म एवं प्रामाणिक है।

सांसारिक मनुष्य शिक्षा में यथार्थ सुधार करपाने में जब अपने को असमर्थ पा रहा है, तो उसके लिये यही एक उपाय शेष रह जाता है कि भारतीय संस्कृति में आस्था रखकर उसके द्वारा प्रतिपादित सर्वोत्तम शिक्षा का अनुसरण करे। यदि हममें योग्यता नहीं है और फिर भी सनातन संस्कृति द्वारा प्रतिपादित प्रशस्त मार्ग पर विश्वास न करें, तो यह मूर्खता ही कहलाएगी।

आधुनिक भारत की यह बड़ी विडंबना है कि संस्कृत, हिन्दी (या अपनी अन्य मातृभाषा) के शब्दों को प्राय: अंग्रेजी शब्दों के माध्यम से जानते हैं। इससे शब्दों के प्रति हमारे विचार संकीर्ण रहते हैं। इस संकीर्णता के कारण हमारा जीवन भी संकीर्ण विचारों के अन्तर्गत ही यात्रा करता रहता है और विभिन्न समस्याओं से घिरा रहता है। संस्कृत भाषा के शब्द उदार और विस्तृत अर्थ वाले होते हैं। उदाहरण के लिए ''शिक्षा'' शब्द को ही लेलीजिए। ''शिक्षा'' शब्द के अर्थ की यदि व्याख्या करें तो इस शब्द में ही यह गर्भित है कि शिक्षा के अन्तर्गत आधिभौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही विद्याओं का समावेश है। यह बात हम इसलिए कह रहे हैं कि आधुनिक शिक्षाविदों में यह विचार अब आया है कि आधिभौतिक शिक्षा के साथ आध्यात्मिक शिक्षा का भी पठन-पाठन होना चाहिए। उनको यह भान नहीं कि संस्कृत भाषा का शब्द ''शिक्षा'' के अर्थ के अन्तर्गत ही दोनों प्रकार की शिक्षाओं का समावेश है और यही शिक्षा की पूर्णता है। श्वेताश्वतर उपनिषद् इसी भाव की पुष्टि करता है।

हमारा कार्यक्षेत्र पठन-पाठन व अनुसंधान का रहा है जो आयु के

Scanned by CamScanner

अंतिम पड़ाव में भी कार्यरत है। पठन-पाठन का यह क्षेत्र पहले ''एयरोस्पेस इंजीनियरिंग'' (Aerospace Engineering) विभाग में था, परन्तु सन् 1995 में सेवानिवृत्ति के पश्चात् शीघ्र ही ''भारतीय संस्कृति'' हो गया (हमारा संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत पुस्तक के आवरण पृष्ठ पर उल्लखित है)। भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही क्षेत्रों में पठन-पाठन का अनुभव होने के कारण सम्भवत: इस विषय में पुस्तक लिखने का विचार मन में आया। यह विचार इतने विलम्ब से क्यों आया, इसका उत्तर देना हमारे लिये भी कठिन है। कोई विचार मन में कब आएगा, यह तो प्रभु इच्छा पर ही निर्भर करता है। जो पाठकगण भारतीय संस्कृति से अधिक परिचित नहीं हैं, उन्हें प्रस्तुत पुस्तक के कुछ विचारों को समझने में थोड़ी कठिनाई हो सकती है।हमने प्रयत्न किया है कि उन पाठकों को यह कठिनाई न प्रतीत हो।

इससे पहले भी इस पुस्तक के दो संस्करण (सन् 2012 और सन् 2014 में) छप चुके हैं, प्रथम संस्करण का शीर्षक (सर्वश्रेष्ठ शिक्षा का आधार और प्रकार क्या हो?) कुछ भिन्न शब्दों में था। पिछले संस्करण के अन्तर्गत आयी हुई विभिन्न त्रुटियों को सुधारा गया है तथा कुछ अभिव्यक्तियों को अधिक स्पष्ट किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशक एवं मुद्रक भी भिन्न हैं, प्रकाशन का कार्य लेखक ने स्वयं ग्रहण किया है, अत: प्रस्तुत पुस्तक इस प्रकाशन का प्रथम संस्करण है।

पुस्तक लेखन की सफलता के निर्धारक पाठकगण ही होते हैं। आशा करता हूँ कि प्रस्तुत पुस्तक पाठकों के लिये उपयोगी होगी। शेष हरि कृपा है।

–शिवकुमार ओझा

Scanned by CamScanner